VOL- IX | ISSUE- III | MARCH | 2022 | PEER REVIEW e-JOURNAL | IMPACT FACTOR 7.331 | ISSN 2349-638x

# शैव पुराणों में पारिस्थितिकी

डॉ प्रवीण यादव

## पारिस्थितिकी की परिभाषा

ब्रह्माण्ड में पृथ्वी पर ही सजीव प्राणी विद्यमान हैं। सभी प्रकार के शरीरी प्राणियों में पौधों वृक्षों अथवा वनस्पति का विशिष्ट स्थान हैं। इन प्राणियों की प्रत्येक जाति में अनेक प्रजातियां एवं पौधों के आवास और परिवेश में विविधता विद्यमान हैं। पृथ्वी के सभी क्षेत्रों में उपलब्ध वृक्ष, वनस्पतियाँ अपने चारों ओर विद्यमान वातावरण या परिवेश के अनुरूप स्वयं को व्यवस्थित कर लेते हैं। इस प्रकार प्रकृति के दो मुख्य संघटक तत्व-सजीव व पर्यावरण परस्पर सम्बद्ध निर्भर और सक्रिय रहते हैं।विभिन्न सजीवों एवं उनके पर्यावरण के आपसी सम्बन्धों के अध्ययन को पारिस्थितिकी कहते हैं। प्राचीन भारतीय चिंतन पद्धति में वनस्पति व प्राणियों पर पर्यावरण के संघटक तत्वों के विशेष प्रभाव को सदैव परिलक्षित किया है और काव्यों में उसे सर्वोत्कृष्ट रूप में स्थान दिया है। इस लेख में पारिस्थितिकी के प्राचीन आयामों को दृष्टिपथ में रखते हुए पौधों और प्राणियों विशेषकर मानव प्रजाति के विशिष्ट तत्वों को व्याख्यायित करने का सबल प्रयास किया है।
इस अध्ययन द्वारा हम निम्न बिन्दुओं या तथ्यों का अन्वेषण करते हैं :-

१. सजीवों का स्व-पर्यावरण से पारस्परिक सम्बन्ध
२. स्थानीय परिस्थिति में सजीव प्राणियों का भौगोलिक वितरण एवं बाहुल्य
३. प्राणियों का भौतिक पर्यावरण के अनुरूप अनुकूलता
४. विभिन्न प्राणि समूहों तथा समुदायों के सदस्यों के मध्य पारस्परिक सम्बन्ध

## पारिस्थितिकी तन्त्र

सभी प्रकार के प्राणी एवं पेड़-पौधे सजीव जगत के दो आधारभूत घटक हैं। इन घटकों के विश्लेषण तथा कार्यप्रणाली के अध्ययन से ही प्रकृति की संरचना एवं कार्यशैली का ज्ञान होता है। प्राचीन ग्रन्थों वैदिक वाङ्गमय, शास्त्रीय साहित्य, पौराणिक ग्रन्थों आदि के अध्ययन से ज्ञात होता है कि जीवों एवं उनका पर्यावरण प्रारम्भ से ही वैज्ञानिक अध्ययन का एक रोचक विषय रहा है। पारस्थितिकी तन्त्र एक कार्यशील इकाईके रूप में निर्धारित होता है। इसे प्रकृति का वह तन्त्र कहा जा सकता है जिसमें जैव एवं अजैव घटकों की संरचना व कार्यशैली का पारिस्थितिक सम्बन्ध निश्चित नियमों के अनुरूप सन्तुलन में रहता है।

भोक्ता और भोग्य-दोनों घटक ही पृथ्वी पर जीवन का अस्तित्व बनाए रखने के लिये परमावश्यक हैं। पृथ्वी के जिस एक भाग में प्रारूपिक पारिस्थितिक तन्त्र कार्यशील रहता है। जिसमें विशिष्ट भूखण्ड, वायु एवं जल की उपस्थिति से सजीव इकाइयाँ उत्पन्न हो जाती हैं, उसे जैव मण्डल कहते हैं। इस रूप में सम्पूर्ण पृथ्वी को ही एक वृहद् पारिस्थितिक मण्डल कहा जा सकता है।

## पारिस्थितिकी तन्त्र संरचना

पारिस्थितिकी के समस्त भोक्ता और भोग्य पदार्थ परस्पर अभिक्रियाएँ करते ऊर्जा प्रवाहित हैं एवं पोषक पदार्थों का परिसंचरण करते है।

१. प्राणी भोक्ता-इस तन्त्र में उपलब्ध समस्त जीवधारियों को सम्मिलित किया जिसमें किसी भी पारिस्थितिक तन्त्र एवं प्राणि समूह एक साथ रहते तथा जीव परस्पर किसी किसी प्रकार एक-दूसरे से सम्बद्ध होते हैं। विभिन्न प्रकार के जीवों द्वारा भोजन प्राप्त करने की प्रक्रिया आधार पर जैविक घटकों को वर्गों में विभक्त किया जा सकता है।

स्वपोषी उत्पादक कहलाते हैं। प्रकाश में अकार्बनिक पदार्थों ग्रहण कर प्रकाश संश्लेषण द्वारा भोज्य पदार्थों का संश्लेषण करते हैं।

(क) प्राथमिक उपभोक्ता - यह अपना भोजन प्राथमिक उत्पादों से प्राप्त करते है।

(ख) द्वितीयक उपभोक्ता-ये प्राणी अपना भोजन प्राथमिक उपभोक्ता से प्राप्त करते है।

(ग) तृतीयक उपभोक्ता- इस वर्ग के उपभोक्ता प्राणी अपना भोजन द्वितीय उपभोक्ता जन्तुओं प्राप्त करते हैं। इसके अतिरिक्त तृतीयक सर्वाहारी शाकाहारी प्राणियों का भक्षण कर पारिस्थितिक मांसाहारी भोजन की इस श्रृंखला में ऐसे प्राणियों को सम्मिलित किया गया है जो मांसाहारी प्राणियों को खा जाते हैं।

(२) सूक्ष्म या लघु उपभोक्ता- ये सजीव भी पारिस्थितिक तन्त्र के महत्त्वपूर्ण घटक होते हैं। इसवर्ग के जीवधारी विभिन्न प्रकार के जटिल कार्बनिक पदार्थों को उनके सरल अकार्बनिक अवयवों में विघटित कर देते हैं। इस उपभोक्ता वर्ग में मुख्यतः कवक, जीवाणु, विषाणु आदि आते हैं। इस प्रकार एक श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया, पारिस्थितिक तन्त्र में निरन्तर संचालित रहती हैं जिसमें उत्पादक या हरे पौधों का उपयोग अन्य उपभोक्ताओं द्वारा किया जाता है। पारिस्थितिक तन्त्र के कार्य-किसी भी पारिस्थितिक तन्त्र का समग्र ज्ञान प्राप्त करने के लिये उसकी संरचना व उसके कार्यों का अध्ययन आवश्यक है। उसकी कार्यप्रणाली के चार महत्त्वपूर्ण आधार होते हैं-(१) ऊर्जा प्रवाह (२) खनिज पदार्थों पारिस्थितिक पिरामिड (४) खाद्य-श्रृंखला परिचक्रण

(३) खाद्य-श्रृंखला पारिस्थितिक तन्त्र में उत्पादक या हरित पौधे, सूर्य की विकिरण ऊर्जा का उपयोग करके भोजन का निर्माण करते हैं। प्राकृतिक रूप पारिस्थितिक तन्त्र विद्यमान पौधों शाकाहारी एवं मांसाहारी प्राणियों में भोजन के परिप्रेक्ष्य जटिल सम्बन्ध होते हैं। इसीलिए इन खाद्य श्रृंखलाओं काएक जाल बन जाता है। इसे खाद्य जाल कहते हैं। इसीलिये भोजन श्रृंखला एक जटिल जाल बन मुख्यतः प्रकृति में दो प्रकार की भोजन होती (क) खाद्य-श्रृंखला, (ख) अपरदी खाद्य श्रृंखला श्रृंखला का शाकाहारी उपभोक्ताओं होती यह श्रृंखला प्रत्यक्षतः सूर्य की विकिरण ऊर्जा पर आधारित होती इसमें पौधों अर्थात् उत्पादकों संचित रासायनिक ऊर्जा निहित होती हैं।

अपरदी खाद्य-श्रृंखला प्रारम्भ पौधों एवं जन्तुओं के मृत विगलित शरीरों से बाद जीवाणु, विषाणु आदि जीवों का इसमें समावेश होता ये जीव अपना भोजन अर्थात् मृत जीवों कार्बनिक अवशेषों से प्राप्त हैं। इन सूक्ष्म जीवों का भक्षण, अपघटक जीवों द्वारा कर जाता है। इसे मृतोपजीवी खाद्य श्रृंखला कहा जाता है। पृथ्वी पर स्थूलतः दो प्रकार के पारिस्थितिक तन्त्र विद्यमान हैं प्राकृतिक पारिस्थितिक तन्त्र तथा मानव निर्मित कृत्रिम पारिस्थितिक तन्त्र । प्राकृतिक पारिस्थितिक तन्त्रों का संचालन प्रकृति में स्वतः ही स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप होता रहता है। इसके संचालन में मानव का कोई हस्तक्षेप नहीं होता है। इसके दो भेद होते हैं-स्थलीय पारिस्थितिक तन्त्र तथा जलीय पारिस्थितिक तन्त्र ।स्थलीय पारिस्थितिक में भूमि पर विद्यमान पारिस्थितिक तन्त्र वन, घास के मैदान व मरूप्रदेश आते हैं। जलीय पारिस्थितिक तन्त्र में जलीय माध्यमों जलाशयों, तालाबों, नदियों, समुद्रों विद्यमान परिस्थितियाँ होती है। मानव निर्मित कृत्रिम पारिस्थितिक तन्त्र के अन्तर्गत मनुष्य द्वारा आवश्यकतानुसार स्थापित एवं नियन्त्रित विभिन्न प्रकार के कृषि क्षेत्रों-गेहूँ, चावल, मक्का या ज्वार के कृषिक्षेत्रों, विभिन्न उद्यानों या सामाजिक वन्य क्षेत्रों का समावेश किया जा सकता है ।

पुराण एवं उसके भेद संस्कृत वाङ्गमय के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों में पुराणों का परिगणन किया गया है। इन्हें वैदिक एवं लौकिक संस्कृत साहित्य के मध्य की कड़ी के रूप में माना जाता है। भारतीय चिन्तन प्रक्रिया में पुराणों की प्राचीनता एवं महत्ता वैदिक साहित्य के समकक्ष है। अथर्व संहिता के अनुसार ऋक्, यजु, साम, छन्द तथा पुराण साथ आविर्भूत हुए हैं। बृहदारण्यकोपनिषद् में कहा गया है जिस प्रकार गीली लकड़ी की अग्नि से धूम्र उत्पन्न होता है उसी प्रकार इस महाभूत रूप परमात्म तत्व से ऋक्, यजु, साम, अथर्व, इतिहास, पुराण, उपनिषद्, विद्या, श्लोक, सूत्र, अनुव्याख्यान निःश्वास रूप से उद्भूत हुए हैं छान्दोग्योपनिषद् में चारों वेदों के साथ पुराण को भी पंचम वेद माना गया है ।

**संदर्भ :-**

१-वैदिक वाङ्गमय के सम्यक् बोध के लिये इतिहास और पुराण का अध्ययन
२-ऋचः सामानि छंदांसि पुराणं यजुषा सह
३-उच्छिष्टाजसिरे सर्वे दिवि देवा दिविश्रिताः अ.सं. ११. ७२६
४-बृ. ४.५.११
५-स होवाच ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमाथर्वणम्। चतुर्थमितिहास पुराणं पञ्चमं वेदम्